फणीश्वरनाथ 'रेणु'

(सन् 1921-1977)

फणीश्वरनाथ 'रेणु' का जन्म बिहार के पूर्णिया ज़िले के औराही हिंगना नामक गाँव में हुआ था। उन्होंने 1942 ई. के 'भारत छोड़ो' स्वाधीनता आंदोलन में भाग लिया। नेपाल के राणाशाही विरोधी आंदोलन में भी उनकी सक्रिय भूमिका रही। वे राजनीति में प्रगतिशील विचारधारा के समर्थक थे। 1953 ई. में वे साहित्य-सृजन के क्षेत्र में आए और उन्होंने कहानी, उपन्यास तथा निबंध आदि विविध साहित्यिक विधाओं में लेखन कार्य किया।

रेणु हिंदी के आंचलिक कथाकार हैं। उन्होंने अंचल-विशेष को अपनी रचनाओं का आधार बनाकर, आंचलिक शब्दावली और मुहावरों का सहारा लेते हुए, वहाँ के जीवन और वातावरण का चित्रण किया है। अपनी गहरी मानवीय संवेदना के कारण वे अभावग्रस्त जनता की बेबसी और पीड़ा स्वयं भोगते-से लगते हैं। इस संवेदनशीलता के साथ उनका यह विश्वास भी जुड़ा है कि आज के त्रस्त मनुष्य के भीतर अपनी जीवन-दशा को बदल देने की अकूत ताकत छिपी हुई है।

*उनके प्रसिद्ध कहानी-संग्रह हैं–**ठुमरी, अगिनखोर, आदिम रात्रि की महक। तीसरी कसम उर्फ़ मारे गए गुलफाम** कहानी पर फ़िल्म भी बन चुकी है। **मैला आँचल** और **परती परिकथा** उनके उल्लेखनीय उपन्यास हैं।*

*फणीश्वरनाथ रेणु स्वतंत्र भारत के प्रख्यात कथाकार हैं। रेणु ने अपनी रचनाओं के द्वारा प्रेमचंद्र की विरासत को नयी पहचान और भंगिमा प्रदान की। इनकी कला सजग आँखें, गहरी मानवीय संवदेना और बदलते सामाजिक यथार्थ की पकड़ अपनी अलग पहचान रखते हैं। रेणु ने **मैला आँचल, 'परती परिकथा'** जैसे अनेक महत्त्वपूर्ण उपन्यासों के साथ अपने शिल्प और आस्वाद में भिन्न हिंदी कथा-नई परंपरा को जन्म दिया। आधुनिकतावादी फैशन से दूर ग्रामीण समाज रेणु की कलम से इतना रससिक्त, प्राणवान और नया आयाम ग्रहण कर सका है कि नगर एवं ग्राम के विवादों से अलग उसे नयी सांस्कृतिक गरिमा प्राप्त हुई। रेणु की कहानियों में आंचलिक शब्दों के प्रयोग से लोकजीवन के मार्मिक स्थलों की पहचान हुई है। उनकी भाषा संवेदनशील, संप्रेषणीय एवं भाव प्रधान है। मर्मांतक पीड़ा और भावनाओं के द्वंद्व को उभारने में लेखक की भाषा अंतरमन को छू लेती है।*

संवदिया *कहानी में मानवीय संवेदना की गहन एवं विलक्षण पहचान प्रस्तुत हुई है। असहाय और सहनशील नारी मन के कोमल तंतु की, उसके दुख और करुणा की, पीड़ा तथा यातना की ऐसी सूक्ष्म पकड़ रेणु जैसे 'आत्मा के शिल्पी' द्वारा ही संभव है। हरगोबिन संवदिया की तरह अपने अंचल के दुखी, विपन्न बेसहारा बड़ी बहुरिया जैसे पात्रों का संवाद लेकर रेणु पाठकों के सम्मुख उपस्थित होते हैं। रेणु ने बड़ी बहुरिया की पीड़ा को उसके भीतर के हाहाकार को संवदिया के माध्यम से अपनी पूरी सहानुभूति प्रदान की है। लोकभाषा की नींव पर खड़ी* ***संवदिया*** *कहानी पहाड़ी झरने की तरह गतिमान है। उसकी गति, लय, प्रवाह, संवाद और संगीत पढ़ने वाले के रोम-रोम में झंकृत होने लगता है।*

संवदिया

हरगोबिन को अचरज हुआ—तो आज भी किसी को संवदिया की ज़रूरत पड़ सकती है। इस ज़माने में जबकि गाँव-गाँव में डाकघर खुल गए हैं, संवदिया के मारफ़त संवाद क्यों भेजेगा कोई? आज तो आदमी घर बैठे ही लंका तक खबर भेज सकता है और वहाँ का कुशल संवाद मँगा सकता है। फिर उसकी बुलाहट क्यों हुई?

हरगोबिन बड़ी हवेली की टूटी ड्योढ़ी पारकर अंदर गया। सदा की भाँति उसने वातावरण को सूँघकर संवाद का अंदाज़ लगाया।... निश्चय ही कोई गुप्त समाचार ले जाना है। चाँद-सूरज को भी नहीं मालूम हो। परेवा-पंछी तक न जाने।

"पाँव लागी, बड़ी बहुरिया।"

बड़ी हवेली की बड़ी बहुरिया ने हरगोबिन को पीढ़ी दी और आँख के इशारे से कुछ देर चुपचाप बैठने को कहा। बड़ी हवेली अब नाममात्र को ही बड़ी हवेली है। जहाँ दिनरात नौकर-नौकरानियों और जन-मज़दूरों की भीड़ लगी रहती थी, वहाँ आज हवेली की बड़ी बहुरिया अपने हाथ से सूपा में अनाज लेकर फटक रही है। इन हाथों में सिर्फ़ मेहँदी लगाकर ही गाँव की नाइन परिवार पालती थी। कहाँ गए वे दिन? हरगोबिन ने लंबी साँस ली।

बड़े भैया के मरने के बाद ही जैसे सब खेल खत्म हो गया। तीनों भाइयों ने आपस में लड़ाई-झगड़ा शुरू किया। रैयतों ने ज़मीन पर दावे करके दखल किया, फिर तीनों भाई गाँव छोड़कर शहर में जा बसे, रह गई बड़ी बहुरिया—कहाँ जाती बेचारी! भगवान भले आदमी को ही कष्ट देते हैं। नहीं तो एक घंटे की बीमारी में बड़े भैया क्यों मरते?...बड़ी बहुरिया की देह से ज़ेवर खींच-छीनकर बँटवारे की लीला हुई थी। हरगोबिन ने देखी है अपनी आँखों से द्रौपदी चीर-हरण लीला! बनारसी साड़ी को तीन टुकड़े करके बँटवारा किया था, निर्दय भाइयों ने। बेचारी बड़ी बहुरिया!

गाँव की मोदिआइन बूढ़ी न जाने कब से आँगन में बैठकर बड़बड़ा रही थी, "उधार का सौदा खाने में बड़ा मीठा लगता है और दाम देते समय मोदिआइन की बात कड़वी लगती है। मैं आज दाम लेकर ही उठूँगी।"

बड़ी बहुरिया ने कोई जवाब नहीं दिया।

हरगोबिन ने फिर लंबी साँस ली। जब तक यह मोदिआइन आँगन से नहीं टलती, बड़ी बहुरिया हरगोबिन से कुछ नहीं बोलेगी। वह अब चुप नहीं रह सका, "मोदिआइन काकी, बाकी-बकाया वसूलने का यह काबुली-कायदा तो तुमने खूब सीखा है।"

'काबुली-कायदा', सुनते ही मोदिआइन तमककर खड़ी हो गई, "चुप रह मुँह-झौंसे! निमौछिये..."।

"क्या करूँ काकी, भगवान ने मूँछ-दाढ़ी दी नहीं, न काबुली आगा साहब की तरह गुलज़ार दाढ़ी...।"

"फिर काबुली का नाम लिया तो जीभ पकड़कर खींच लूँगी।"

हरगोबिन ने जीभ बाहर निकालकर दिखलाई। अर्थात्-खींच ले।

...पाँच साल पहले गुल मुहम्मद आगा उधार कपड़ा लगाने के लिए गाँव में आता था और मोदिआइन के ओसारे पर दुकान लगाकर बैठता था। आगा कपड़ा देते समय बहुत मीठा बोलता और वसूली के समय ज़ोर-ज़ुल्म से एक का दो वसूलता। एक बार कई उधार लेनेवालों ने मिलकर काबुली की ऐसी मरम्मत कर दी कि फिर लौटकर गाँव में नहीं आया। लेकिन इसके बाद ही दुखनी मोदिआइन लाल मोदिआइन हो गई।... काबुली क्या, काबुली बादाम के नाम से भी चिढ़ने लगी मोदिआइन। गाँव के नाचनेवालों ने नाच में काबुली का स्वांग किया था। "तुम अमारा मुलुक जाएगा मोदिआइन? अम काबुली बादाम-पिस्ता-अकरोट किलायगा...!"

मोदिआइन बड़बड़ाती, गाली देती हुई चली गई तो बड़ी बहुरिया ने हरगोबिन से कहा, "हरगोबिन भाई, तुमको एक संवाद ले जाना है। आज ही। बोलो, जाओगे न?"

"कहाँ?"

"मेरी माँ के पास।"

हरगोबिन बड़ी बहुरिया की छलछलाई आँखों में डूब गया, "कहिए, क्या संवाद है?"

संवाद सुनाते समय बड़ी बहुरिया सिसकने लगी। हरगोबिन की आँखें भी भर आईं।... बड़ी हवेली की लक्ष्मी को पहली बार इस तरह सिसकते देखा है हरगोबिन ने। वह बोला, "बड़ी बहुरिया, दिल को कड़ा कीजिए।"

"और कितना कड़ा करूँ दिल?... माँ से कहना, मैं भाई-भाभियों की नौकरी करके पेट पालूँगी। बच्चों की जूठन खाकर एक कोने में पड़ी रहूँगी, लेकिन यहाँ अब नहीं... अब नहीं रह सकूँगी। ...कहना, यदि माँ मुझे यहाँ से नहीं ले जाएगी तो मैं किसी दिन गले में घड़ा बाँधकर पोखरे में डूब मरुँगी।... बथुआ-साग खाकर कब तक जीऊँ? किसलिए... किसके लिए?"

हरगोबिन का रोम-रोम कलपने लगा। देवर-देवरानियाँ भी कितने बेदर्द हैं। ठीक अगहनी धान के समय बाल-बच्चों को लेकर शहर से आएँगे। दस-पंद्रह दिनों में कर्ज़-उधार की ढेरी लगाकर, वापस जाते समय दो-दो मन के हिसाब से चावल-चूड़ा ले जाएँगे। फिर आम के मौसम में आकर हाज़िर। कच्चा-पक्का आम तोड़कर बोरियों में बंद करके चले जाएँगे। फिर उलटकर कभी नहीं देखते...राक्षस हैं सब!

बड़ी बहुरिया आँचल के खूँट से पाँच रुपए का एक गंदा नोट निकालकर बोली, "पूरा राह-खर्च भी नहीं जुटा सकी। आने का खर्च माँ से माँग लेना। उम्मीद है, भैया तुम्हारे साथ ही आवेंगे।"

हरगोबिन बोला, "बड़ी बहुरिया, राह-खर्च देने की ज़रूरत नहीं। मैं इंतज़ाम कर लूँगा।"

"तुम कहाँ से इंतज़ाम करोगे?"

"मैं आज दस बजे की गाड़ी से ही जा रहा हूँ।"

बड़ी बहुरिया हाथ में नोट लेकर चुपचाप, भावशून्य दृष्टि से हरगोबिन को देखती रही। हरगोबिन हवेली से बाहर आ गया। उसने सुना, बड़ी बहुरिया कह रही थी, "मैं तुम्हारी राह देख रही हूँ।"

संवदिया!...अर्थात संदेशवाहक!

हरगोबिन संवदिया!...संवाद पहुँचाने का काम सभी नहीं कर सकते। आदमी भगवान के घर से संवदिया बनकर आता है। संवाद के प्रत्येक शब्द को याद रखना, जिस सुर और स्वर में संवाद सुनाया गया है, ठीक उसी ढंग से जाकर सुनाना सहज काम नहीं। गाँव के लोगों की गलत धारणा है कि निठल्ला, कामचोर और पेटू आदमी ही संवदिया का काम करता है। न आगे नाथ, न पीछे पगहा। बिना मज़दूरी लिए ही जो गाँव-गाँव संवाद पहुँचावे, उसको और क्या कहेंगे?...औरतों का गुलाम। ज़रा-सी मीठी बोली सुनकर ही नशे में आ जाए, ऐसे मर्द को भी भला मर्द कहेंगे? किंतु, गाँव में कौन ऐसा है, जिसके घर की माँ-बहू-बेटी का संवाद हरगोबिन ने नहीं पहुँचाया है?...लेकिन ऐसा संवाद पहली बार ले जा रहा है वह।

गाड़ी पर सवार होते ही हरगोबिन को पुराने दिनों और संवादों की याद आने लगी। एक करुण गीत की भूली हुई कड़ी फिर उसके कानों के पास गूँजने लगी।

'पैयाँ पड़ूँ दाढ़ी धरूँ...

हमारो संवाद ले ले जाहु रे संवदिया-या-या!...'

बड़ी बहुरिया के संवाद का प्रत्येक शब्द उसके मन में काँटे की तरह चुभ रहा है—किसके भरोसे यहाँ रहूँगी? एक नौकर था, वह भी कल भाग गया। गाय खूँटे से बँधी भूखी-प्यासी हिकर रही है। मैं किसके लिए इतना दुख झेलूँ?

हरगोबिन ने अपने पास बैठे हुए एक यात्री से पूछा, "क्यों भाईसाहेब, थाना बिंहपुर में डाकगाड़ी रुकती है या नहीं?"

यात्री ने मानो कुढ़कर कहा, "थाना बिंहपुर में सभी गाड़ियाँ रुकती हैं।"

हरगोबिन ने भाँप लिया, यह आदमी चिड़चिड़े स्वभाव का है, इससे कोई बातचीत नहीं जमेगी। वह फिर बड़ी बहुरिया के संवाद को मन-ही-मन दुहराने लगा... लेकिन, संवाद सुनाते समय वह अपने कलेजे को कैसे संभाल सकेगा! बड़ी बहुरिया संवाद कहते समय जहाँ-जहाँ रोई हैं, वहाँ वह भी रोयेगा!

कटिहार जंक्शन पहुँचकर उसने देखा, पंद्रह-बीस साल में बहुत कुछ बदल गया है। अब स्टेशन पर उतरकर किसी से कुछ पूछने की कोई ज़रूरत नहीं। गाड़ी पहुँची और तुरंत भोंपे से आवाज़ अपने-आप निकलने लगी–'थाना बिंहपुर, खगड़िया और बरौनी जानेवाले यात्री तीन नंबर प्लेटफ़ार्म पर चले जाएँ। गाड़ी लगी हुई है।'

हरगोबिन प्रसन्न हुआ–कटिहार पहुँचने के बाद ही मालूम होता है कि सचमुच सुराज हुआ है। इसके पहले कटिहार पहुँचकर किस गाड़ी में चढ़े और किधर जाए, इस पूछताछ में ही कितनी बार उसकी गाड़ी छूट गई है।

गाड़ी बदलने के बाद फिर बड़ी बहुरिया का करुण मुखड़ा उसकी आँखों के सामने उभर गया... हरगोबिन भाई, माँ से कहना, भगवान ने आँखें फेर लीं, लेकिन मेरी माँ तो है... किसलिए... किसके लिए... मैं बथुआ-साग खाकर कब तक जीऊँ?'

थाना बिंहपुर स्टेशन पर गाड़ी पहुँची तो हरगोबिन का जी भारी हो गया। इसके पहले भी कई भला-बुरा संवाद लेकर वह इस गाँव में आया है, कभी ऐसा नहीं हुआ। उसके पैर गाँव की ओर बढ़ ही नहीं रहे थे। इसी पगडंडी से बड़ी बहुरिया अपने मैके लौट आवेगी। गाँव छोड़कर चली जावेगी। फिर कभी नहीं आवेगी!

हरगोबिन का मन कलपने लगा–तब गाँव में क्या रह जाएगा? गाँव की लक्ष्मी ही गाँव छोड़कर जावेगी!... किस मुँह से वह ऐसा संवाद सुनाएगा? कैसे कहेगा कि बड़ी बहुरिया बथुआ-साग खाकर गुज़ारा कर रही है?... सुननेवाले हरगोबिन के गाँव का नाम लेकर थूकेंगे–कैसा गाँव है, जहाँ लक्ष्मी जैसी बहुरिया दुख भोग रही है!

अनिच्छापूर्वक हरगोबिन ने गाँव में प्रवेश किया।

हरगोबिन को देखते ही गाँव के लोगों ने पहचान लिया–जलालगढ़ गाँव का संवदिया आया है!... न जाने क्या संवाद लेकर आया है!

"राम-राम भाई! कहो, कुशल समाचार ठीक है न?"

"राम-राम, भैयाजी! भगवान की दया से आनंदी है।"

"उधर पानी-बूँदी पड़ा है?"

बड़ी बहुरिया के बड़े भाई ने हरगोबिन को नहीं पहचाना। हरगोबिन ने अपना परिचय दिया, तो उन्होंने सबसे पहले अपनी बहन का समाचार पूछा, "दीदी कैसी है?"

"भगवान की दया से सब राजी-खुशी है।"

मुँह-हाथ धोने के बाद हरगोबिन की बुलाहट आँगन में हुई। अब हरगोबिन काँपने लगा। उसका कलेजा धड़कने लगा... ऐसा तो कभी नहीं हुआ?... बड़ी बहुरिया की छलछलाई हुई आँखें! सिसकियों से भरा हुआ संवाद! उसने बड़ी बहुरिया की बूढ़ी माता को पाँवलागी की।

बूढ़ी माता ने पूछा, "कहो बेटा, क्या समाचार है?"

"मायजी, आपके आशीर्वाद से सब ठीक हैं।"

"कोई संवाद?"

"एं?... संवाद... जी, संवाद तो कोई नहीं। मैं कल सिरसिया गाँव आया था, तो सोचा कि एक बार चलकर आप लोगों का दर्शन कर लूँ।"

बूढ़ी माता हरगोबिन की बात सुनकर कुछ उदास-सी हो गई, "तो तुम कोई संवाद लेकर नहीं आए हो?"

"जी नहीं, कोई संवाद नहीं।... ऐसे बड़ी बहुरिया ने कहा है कि यदि छुट्टी हुई तो दशहरा के समय गंगाजी के मेले में आकर माँ से भेंट-मुलाकात कर जाऊँगी।" बूढ़ी माता चुप रही। हरगोबिन बोला, "छुट्टी कैसे मिले? सारी गृहस्थी बड़ी बहुरिया के ऊपर ही है।"

बूढ़ी माता बोली, "मैं तो बबुआ से कह रही थी कि जाकर दीदी को लिवा लाओ, यहीं रहेगी। वहाँ अब क्या रह गया है? ज़मीन-जायदाद तो सब चली ही गई। तीनों देवर अब शहर में जाकर बस गए हैं। कोई खोज-खबर भी नहीं लेते। मेरी बेटी अकेली...।"

नहीं मायजी! ज़मीन–जायदाद अभी भी कुछ कम नहीं। जो है, वही बहुत है। टूट भी गई है, है तो आखिर बड़ी हवेली ही। 'सवांग' नहीं है, यह बात ठीक है! मगर, बड़ी बहुरिया का तो सारा गाँव ही परिवार है। हमारे गाँव की लक्ष्मी है बड़ी बहुरिया।... गाँव की लक्ष्मी गाँव को छोड़कर शहर कैसे जाएगी? यों, देवर लोग हर बार आकर ले जाने की ज़िद करते हैं।"

बूढ़ी माता ने अपने हाथ हरगोबिन को जलपान लाकर दिया, "पहले थोड़ा जलपान कर लो, बबुआ!"

जलपान करते समय हरगोबिन को लगा, बड़ी बहुरिया दालान पर बैठी उसकी राह देख रही है–भूखी–प्यासी...। रात में भोजन करते समय भी बड़ी बहुरिया मानो सामने आकर बैठ गई... कर्ज़–उधार अब कोई देते नहीं।... एक पेट तो कुत्ता भी पालता है, लेकिन मैं?... माँ से कहना...!

हरगोबिन ने थाली की ओर देखा–दाल–भात, तीन किस्म की भाजी, घी, पापड़, अचार।... बड़ी बहुरिया बथुआ–साग उबालकर खा रही होगी।

बूढ़ी माता ने कहा, "क्यों बबुआ, खाते क्यों नहीं?"

"मायजी, पेटभर जलपान जो कर लिया है।"

"अरे, जवान आदमी तो पाँच बार जलपान करके भी एक थाल भात खाता है।"

हरगोबिन ने कुछ नहीं खाया। खाया नहीं गया।

संवादिया डटकर खाता है और 'अफर' कर सोता है, किंतु हरगोबिन को नींद नहीं आ रही है। ...यह उसने क्या किया? क्या कर दिया? वह किसलिए आया था? वह झूठ क्यों बोला?... नहीं, नहीं, सुबह उठते ही वह बूढ़ी माता को बड़ी बहुरिया का सही संवाद सुना देगा–अक्षर–अक्षर, 'मायजी, आपकी इकलौती बेटी बहुत कष्ट में है। आज ही किसी को भेजकर बुलवा लीजिए। नहीं तो वह सचमुच कुछ कर बैठेगी। आखिर, किसके लिए वह इतना सहेगी!... बड़ी बहुरिया ने कहा है, भाभी के बच्चों की जूठन खाकर वह एक कोने में पड़ी रहेगी...!'

रातभर हरगोबिन को नींद नहीं आई।

आँखों के सामने बड़ी बहुरिया बैठी रही–सिसकती, आँसू पोंछती हुई। सुबह उठकर उसने दिल को कड़ा किया। वह संवदिया है। उसका काम है सही–सही संवाद पहुँचाना। वह बड़ी बहुरिया का संवाद सुनाने के लिए बूढ़ी माता के पास जा बैठा। बूढ़ी माता ने पूछा, "क्या है, बबुआ? कुछ कहोगे?"

"मायजी, मुझे इसी गाड़ी से वापस जाना होगा। कई दिन हो गए।"

"अरे, इतनी जल्दी क्या है! एकाध दिन रहकर मेहमानी कर लो।"

"नहीं, मायजी! इस बार आज्ञा दीजिए। दशहरा में मैं भी बड़ी बहुरिया के साथ आऊँगा। तब डटकर पंद्रह दिनों तक मेहमानी करूँगा।"

बूढ़ी माता बोली, "ऐसी जल्दी थी तो आए ही क्यों? सोचा था, बिटिया के लिए दही-चूड़ा भेजूँगी। सो दही तो नहीं हो सकेगा आज। थोड़ा चूड़ा है बासमती धान का, लेते जाओ।"

चूड़ा की पोटली बगल में लेकर हरगोबिन आँगन से निकला तो बड़ी बहुरिया के बड़े भाई ने पूछा, "क्यों भाई, राह-खर्च तो है?"

हरगोबिन बोला, "भैयाजी, आपकी दुआ से किसी बात की कमी नहीं।"

स्टेशन पर पहुँचकर हरगोबिन ने हिसाब किया। उसके पास जितने पैसे हैं, उससे कटिहार तक का टिकट ही वह खरीद सकेगा। और यदि चौअन्नी नकली साबित हुई तो सैमापुर तक ही।...बिना टिकट के वह एक स्टेशन भी नहीं जा सकेगा। डर के मारे उसकी देह का आधा खून सूख जाएगा।

गाड़ी में बैठते ही उसकी हालत अजीब हो गई। वह कहाँ आया था? क्या करके जा रहा है? बड़ी बहुरिया को क्या जवाब देगा?

यदि गाड़ी में निरगुन गानेवाला सूरदास नहीं आता, तो न जाने उसकी क्या हालत होती! सूरदास के गीतों को सुनकर उसका जी स्थिर हुआ, थोड़ा—

...कि आहो रामा!
नैहरा को सुख सपन भयो अब,
देश पिया को डोलिया चली-ई-ई-ई,
भाई रोओ मति, यही करम की गति... !!

सूरदास चला गया तो उसके मन में बैठी हुई बड़ी बहुरिया फिर रोने लगी–किसके लिए इतना दुख सहूँ?

पाँच बजे भोर में वह कटिहार स्टेशन पहुँचा।

भोंपे से आवाज़ आ रही थी–बैरगाह्री, कुसियार और जलालगढ़ जानेवाले यात्री एक नंबर प्लेटफ़ार्म पर चले जाएँ।

हरगोबिन को जलालगढ़ जाना है, किंतु वह एक नंबर प्लेटफ़ार्म पर कैसे जाएगा? उसके पास तो कटिहार तक का ही टिकट है।... जलालगढ़! बीस कोस!... बड़ी बहुरिया राह देख रही होगी।... बीस कोस की मंज़िल भी कोई दूर की मंजिल है? वह पैदल ही जाएगा।

हरगोबिन महावीर-विक्रम-बजरंगी का नाम लेकर पैदल ही चल पड़ा। दस कोस तक वह मानो 'बाई' के झोंके पर रहा। कस्बा-शहर पहुँचकर उसने पेटभर पानी पी लिया। पोटली में नाक लगाकर उसने सूँघा–अहा! बासमती धान का चूड़ा है। माँ की सौगात-बेटी के लिए। नहीं, वह इससे एक मुट्ठी भी नहीं खा सकेगा... किंतु, वह क्या जवाब देगा बड़ी बहुरिया को?

उसके पैर लड़खड़ाए।... उहूँ, अभी वह कुछ नहीं सोचेगा। अभी सिर्फ़ चलना है। जल्दी पहुँचना है, गाँव।... बड़ी बहुरिया की डबडबायी हुई आँखें उसको गाँव की ओर खींच रही थीं–मैं बैठी राह ताकती रहूँगी!...

पंद्रह कोस!... माँ से कहना, अब नहीं रह सकूँगी। सोलह... सत्रह... अठारह... जलालगढ़ स्टेशन का सिगनल दिखलाई पड़ता है... गाँव का ताड़ सिर ऊँचा करके उसकी चाल को देख रहा है। उसी ताड़ के नीचे बड़ी हवेली के दालान पर चुपचाप टकटकी लगाकर राह देख रही है बड़ी बहुरिया–भूखी-प्यासी–'हमरो संवाद ले जाहु रे संवदिया-या-या!!'

लेकिन, यह कहाँ चला आया हरगोबिन? यह कौन गाँव है? पहली साँझ में ही अमावस्या का अंधकार! किस राह से वह किधर जा रहा है?... नदी है! कहाँ से आ गई नदी? नदी नहीं, खेत हैं।... ये झोंपड़े हैं या हाथियों का झुंड? ताड़ का पेड़ किधर गया? वह राह भूलकर न जाने कहाँ भटक गया... इस गाँव में आदमी नहीं रहते क्या?... कहीं कोई रोशनी नहीं, किससे पूछे?... कहाँ, वह रोशनी है या आँखें? वह खड़ा है या चल रहा है? वह गाड़ी में है या धरती पर?

"हरगोबिन भाई, आ गए?" बड़ी बहुरिया की बोली या कटिहार स्टेशन का भोंपा बोल रहा है?

"हरगोबिन भाई, क्या हुआ तुमको...?"

"बड़ी बहुरिया?"

हरगोबिन ने हाथ से टटोलकर देखा, वह बिछावन पर लेटा हुआ है। सामने बैठी छाया को छूकर बोला, "बड़ी बहुरिया?"

"हरगोबिन भाई, अब जी कैसा है?... लो, एक घूँट दूध और पी लो।... मुँह खोलो.... हाँ... पी जाओ। पीओ!"

हरगोबिन होश में आया।... बड़ी बहुरिया का पैर पकड़ लिया, "बड़ी बहुरिया!... मुझे माफ़ करो। मैं तुम्हारा संवाद नहीं कह सका।... तुम गाँव छोड़कर मत जाओ। तुमको कोई कष्ट नहीं होने दूँगा। मैं तुम्हारा बेटा! बड़ी बहुरिया, तुम मेरी माँ, सारे गाँव की माँ हो! मैं अब निठल्ला बैठा नहीं रहूँगा। तुम्हारा सब काम करूँगा।... बोलो, बड़ी माँ, तुम... तुम गाँव छोड़कर चली तो नहीं जाओगी? बोलो...!"

बड़ी बहुरिया गरम दूध में एक मुट्ठी बासमती चूड़ा डालकर मसकने लगी।... संवाद भेजने के बाद से ही वह अपनी गलती पर पछता रही थी।

प्रश्न-अभ्यास

1. संवदिया की क्या विशेषताएँ हैं और गाँववालों के मन में संवदिया की क्या अवधारणा है?
2. बड़ी हवेली से बुलावा आने पर हरगोबिन के मन में किस प्रकार की आशंका हुई?
3. बड़ी बहुरिया अपने मायके संदेश क्यों भेजना चाहती थी?
4. हरगोबिन बड़ी हवेली में पहुँचकर अतीत की किन स्मृतियों में खो जाता है?
5. संवाद कहते वक्त बड़ी बहुरिया की आँखें क्यों छलछला आईं?
6. गाड़ी पर सवार होने के बाद संवदिया के मन में काँटे की चुभन का अनुभव क्यों हो रहा था। उससे छुटकारा पाने के लिए उसने क्या उपाय सोचा?
7. बड़ी बहुरिया का संवाद हरगोबिन क्यों नहीं सुना सका?
8. 'संवदिया डटकर खाता है और अफर कर सोता है' से क्या आशय है?
9. जलालगढ़ पहुँचने के बाद बड़ी बहुरिया के सामने हरगोबिन ने क्या संकल्प लिया?
10. 'डिजिटल इंडिया' के दौर में संवदिया की क्या कोई भूमिका हो सकती है?

भाषा-शिल्प

1. इन शब्दों का अर्थ समझिए–

   काबुली-कायदा ....

   रोम-रोम कलपने लगा ....

   अगहनी धान ....

2. पाठ से प्रश्नवाचक वाक्यों को छाँटिए और संदर्भ के साथ उन पर टिप्पणी लिखिए।
3. इन पंक्तियों की व्याख्या कीजिए–
   (क) बड़ी हवेली अब नाममात्र को ही बड़ी हवेली है।
   (ख) हरगोबिन ने देखी अपनी आँखों से द्रौपदी की चीरहरण लीला।
   (ग) बथुआ साग खाकर कब तक जीऊँ?
   (घ) किस मुँह से वह ऐसा संवाद सुनाएगा।

योग्यता-विस्तार

1. संवदिया की भूमिका आपको मिले तो आप क्या करेंगे? संवदिया बनने के लिए किन बातों का ध्यान रखना पड़ता है?
2. इस कहानी का नाट्य रूपांतरण कर विद्यालय के मंच पर प्रस्तुत कीजिए।

शब्दार्थ और टिप्पणी

संवदिया	–	संदेशवाहक, संदेश पहुँचाने वाला
मारफ़त	–	माध्यम, ज़रिया
परेवा	–	कबूतर, कोई तेज़ उड़ने वाला पक्षी
सूपा	–	छाज, सूप
रैयत	–	प्रजा
हिकर	–	बेचैन होकर पुकारना
अफरना	–	पेट भरकर खाना
चूड़ा	–	चिड़वा
बहुरिया	–	पुत्रवधू
दखल	–	हस्तक्षेप, अधिकार माँगना
आगे नाथ न पीछे पगहा	–	कोई ज़िम्मेदारी न होना
कलेजा धड़कना	–	घबरा जाना
खोज खबर न लेना	–	जानकारी प्राप्त न करना, पूछताछ न करना
खून सूख जाना	–	बहुत अधिक डर जाना